वर्षम् १६ अङ्कः २
अक्टूबर तः दिसम्बर २०२० पर्यन्तम्

RNI No.
DELSAN/2002/8921

ISSN : 2278-8360

संस्कृत-मञ्जरी

अन्ताराष्ट्रिया मूल्याङ्किता त्रैमासिकी शोधपत्रिका

An International Referred Quarterly Research Journal

दिल्ली संस्कृत अकादमी
दिल्ली सर्वकारः

सम्पादकः
डॉ.अरुण कुमार झा
सचिवः

पंजीकरणसंख्या-डी०ई०एल०एस०ए०एन० 2002/8921

आई०एस०एस०एन०-2278-8360

मूल्यम्-२५रूप्यकाणि

संस्कृत-मञ्जरी

SANSKRIT-MANJARI

अन्ताराष्ट्रिया मूल्याङ्किता त्रैमासिकी शोधपत्रिका

An International Referred Quarterly Research Journal

वर्षम् १९ अङ्कः २

(अक्टूबर तः दिसम्बर २०२० पर्यन्तम्)

सम्पादकः

डॉ. अरुण कुमार झा

सचिवः

सहायकसम्पादकः

प्रद्युम्नचन्द्रः

प्रकाशकः

दिल्ली संस्कृत अकादमी

(दिल्लीसर्वकारः)

DELHI SANSKRIT ACADEMY

(Govt. of N.C.T. of Delhi)

पत्रिका-परामर्शकाः

डॉ. पङ्कज कुमार मिश्रः

डॉ. बलराम शुक्लः

डॉ. पूर्वा भारद्वाजः

डॉ. रणजीत बेहेरा

प्रकाशकः

सचिवः

दिल्ली-संस्कृत-अकादमी, दिल्ली-सर्वकारः

प्लॉट सं०-५, झण्डेवालानम्, करोलबागोपनगरम्, नवदेहली-११०००५

दूरभाषः - ०११-२३६३५५९२, २३६८१८३५

सदस्यताशुल्कम्

प्रति-अङ्कम्	:	२५ रूप्यकाणि,
~~वार्षिकम्~~	:	~~१०० रूप्यकाणि~~,
त्रैवार्षिकम्	:	३०० रूप्यकाणि,
पञ्चवार्षिकम्	:	५०० रूप्यकाणि,

ISSN - 2278-8360

©दिल्ली-संस्कृत-अकादमी, दिल्ली-सर्वकारः

©Delhi Sanskrit Academy, Govt. of N.C.T of Delhi

E-mail Id : delhisanskritacademy@ gmail.com

Website : www.sanskritacademy.delhi.gov.in

शुल्कप्रदानप्रकारः

बैंकधनादेशः (डी०डी०), डाकधनादेशः (मनिआर्डर) अथवा सी०टी०सी० चैकमाध्यमेन

(दिल्लीसंस्कृतअकादमीपक्षे)

Mode of Payment:

Demand Draft, Money Order or by CTC Cheque

(In favour of Delhi Sanskrit Academy)

सम्पादकीयम्

अयि! शास्त्राब्धिमन्थनसमुत्पन्नपीयूषरसास्वादकुशला: देववाणीसमुपासका: सुधीवरा:। "भारतस्य प्रतिष्ठे द्वे संस्कृतं संस्कृतिस्तथा" वाक्यमिदं संस्कृतस्य संस्कृतेश्च भारतस्य प्रतिष्ठाकर्तृत्वं व्यनक्तीत्यत्र न कोऽपि सन्देह:।

वस्तुत: संस्कृतसाहित्यं ज्ञानविज्ञानयो: भण्डागारो वर्तते। एतस्य भण्डागारस्य समृद्धये व्यापकरूपेण संस्कृतवाङ्मये निहितचिन्तनप्रवाहस्य निरन्तरं प्रचाराय प्रसाराय चास्ति संस्कृतपत्रिकाया: महत्त्वपूर्णं योगदानम्। एतद् उद्देश्यं पूरयन्ती प्राचीनज्ञानविज्ञानं च प्रकाशयन्ती देहली संस्कृत अकादम्या: संस्कृतमञ्जरीति नामधेया अन्ताराष्ट्रियख्यातिलब्धा शोधपत्रिकेयं। तत्र यथापूर्णम् अस्मिन्नपि वर्षे अस्या: पत्रिकाया: प्रकाशनं भवतीति परमसन्तोषस्य विषय:।

आशासे विविधशास्त्रीयलेखै: सुसज्जितेयं पत्रिका शोध-छात्राणां संस्कृतानुरागीनाञ्च कृते समुपकारिका प्रमोदास्पदा च स्यादिति ।

शकाब्द: १९४२
माघकृष्णैकादशी

भावत्क:
डॉ. अरुण कुमार झा
सचिव:

अनुक्रमणिका

संस्कृतभागः पृष्ठसंख्या

सम्पादकीयम् III

१. गीतोक्तदृष्ट्या श्रेष्ठं प्रबन्धनम् १
-डॉ.ओमप्रकाश पारीक

२. शब्दस्वरूपम् ६
– प्रभातकुमारमहापात्रः

३. प्राक्तना शिक्षा प्रणाली राष्ट्रियता च ९
– डॉ. रामप्रकाश दासः

४. श्रीराधामाधवनाटकस्य पात्राणां विमर्शः १५
– ईश्वरसिंहः

५. वर्षाहर्षकाव्यस्य लोकोत्तरचमत्कारिता २०
– डॉ. लक्ष्मीकान्त विमलः

६. संस्कृतमञ्जर्यां-प्रकाशित-रूपकेषु समाजस्य स्वरूपम् २५
– उदयप्रकाश झा

हिन्दीभागः

७. मानव जीवन में यज्ञ की आवश्यकता ३८
– रिंकेशभदूला

८. कथासरित्सागर में रामकथा ४३
– डॉ. संजय कुमार

९. आधुनिक संस्कृत कवियों के काव्यों में निरूपित विदेशी छन्द ५१
– अरुण कुमार निषाद

१०. साहित्य में ज्ञान-विज्ञानपरक संस्कृत ग्रन्थों की भूमिका ५६
-डॉ.कैलाशनाथ द्विवेदी

अंग्रेजीभागः-

११. **Medieval Indian History** ६०
- Desh Deepak Singh

१२. **The Karmayoga in the Geeta & Its Importance to the contemporary world.** ६२
- Ajit Kar

कथासरित्सागर में रामकथा

-डॉ. संजय कुमार

राम का जीवनदर्शन समाज में ऐसा रच-बस गया है कि भारत ही नहीं बल्कि विश्व के अनेक देश रामकथा के जीवनादर्शों से परिचित हैं। इण्डोनेशिया, बाली, सुमात्रा, जावा, कम्बोडिया, वर्मा आदि देशों में रामकथा सम्पूर्ण जनमानस में नाटकों, लोकगीतों तथा मन्दिरों के रूप में विद्यमान है। रामकथा का प्रभाव जापान, आस्ट्रेलिया, पश्चिम एशिया व अनेक अरब देशों तथा अफ्रीकी देशों में रहने वाले हिन्दू समुदाय के लोग रामकथा से प्रभावित हैं। दक्षिण अफ्रीका और मोरिशस में भी रामकथा का विविध रूप देखने को मिलता है। रामकथा की विश्वव्यापकता का अनुमान इससे भी लगाया जा सकता है कि भारत के अतिरिक्त तीन देशों में अयोध्या है- थाईलैण्ड, कोरिया और इण्डोनेशिया। यहाँ के लोगों का मानना है कि राम इसी अयोध्या के निवासी रहे हैं। इन देशों के भाषा एवं संस्कृति के अनुसार ही रामकथा प्रचलित है। यह स्वाभाविक है कि साहित्य तो सदैव समाज एवं संस्कृति के आन-वान में विकसित हुआ है। भारत में स्वयं ही अनेक भाषाओं व अनेक रूपों में रामकथा का वर्णन किया गया है। संस्कृत, पालि, प्राकृत, हिन्दी, मराठी, गुजराती, तमिल इत्यादि भाषाओं में रामकथा का वर्णन मिलता है। लेकिन सबके मूल में वाल्मीकि की ही रामायण है। तमिल में 'कम्बरामायण' संस्कृत में वाल्मीकीय रामायण और हिन्दी में (अवधी में) रामचरितमानस को जो प्रतिष्ठा मिली वह अन्य को नहीं मिल सकी। हाँ संस्कृत में कालिदास, भवभूति, भट्टि, कुमारदास, राजशेखर, जयदेव और भोज आदि के अतिरिक्त आधुनिक संस्कृत कवियों में 'रेवाप्रसाद द्विवेदी', 'अभिराजराजेन्द्र मिश्र' तथा रामशंकर अवस्थी आदि रामकथा को अपनी कल्पना और देशकाल के अनुसार गढ़ा है।

इनकी रचनाओं में विविध प्रकार से रामकथा में नवीनताएं भी देखने को मिलती हैं। इनके नये कलेवर, नये प्रतिमान और दृष्टांत निश्चित ही साहित्य धर्म से पोषित हैं। इन सब में पर्याप्त अन्तर भी है जिसका कारण कवि की स्वतंत्रता और उसके दृष्टिकोण को माना जाता है। एक बात और महत्वपूर्ण है जब सभी कथाएं एक जैसी हो उनमें कोई नवीनता नहीं हो तो बार-बार अन्य लोगों के द्वारा एक ही बात क्यों लिखी जाए? साहित्य तो छणे-छणे नवीनता में विश्वास रखता है। उसकी यही नवीनता तो सहृदय के लिए रमणीय है। इन विविध रामकथाओं में कवि की स्वतंत्रता ही महत्वपूर्ण है। वह अपनी रुचि-मति के अनुसार राई को पर्वत और राजा को रंक बना सकता है, जिसके लिए उसे किसी उपादान की भी आवश्यकता नहीं होती है। उसकी प्रतिभा ही साधन है। किसी ने मूल कथा में कुछ जोड़ा है तो किसी ने छोड़ा भी है लेकिन सबका उपजीव्य वाल्मीकीय रामायण ही है।

Kumar

'कथासरित्सागर' के अलंकारवती नामक नवम् लम्बक के प्रथम तरंग में रामकथा का निर्देश कवि सोमदेव ने किया है। यहाँ रामकथा का सन्निवेश कवि के द्वारा उस समय की जाती है जब नरवाहनदत्त अलंकारवती के सौन्दर्य पर मुग्ध होकर एक रात्रि पाणिग्रहण शेष रहने पर वह वियोग की मनोदशा को प्राप्त हुआ है। नरवाहनदत्त और अलंकारवती दोनों एक दूसरे के लिए वियोग से दुःखी हैं। दोनों की आँखों में आंसू हैं। उनकी इस अवस्था को देखकर अलंकारवती की माँ कंचनप्रथा कहती है कि एक रात्रि के ही वियोग में तुम दोनों इतना अधीर क्यों हो रहे हो? धैर्यशाली व्यक्ति अनिश्चित अवधि तक चिरकालीन विरह को सहन करते हैं। इस सम्बन्ध में रामभद्र और सीतादेवी के वियोग और संघर्ष का कथानक सुनाया गया है।[1] यह कथानक मनुष्य को विषम परिस्थिति तथा असह्य वियोग को सहन करने की प्रेरणा देता है। यहाँ राम कथानक की सृष्टि उस समय हुई है जब दो प्रेमी युगल अपने को मात्र एक रात्रि के वियोग को सहन करने में असमर्थ दिखाई देते हैं। जिन्हें सान्त्वना के रूप में सोमदेव द्वारा कथानक के माध्यम से राम और सीता के जीवन दशा को दिखाया गया है जिन्हें सीताहरण, सीता परित्याग और सतीत्त्व की परीक्षा के मोल को सहना पड़ा है।

कथा के प्रारम्भ में यह बताया गया है प्राचीन समय में अयोध्या के राजा दशरथ थे जिनके चार पुत्र- राम, भरत, शत्रुघ्न और लक्ष्मण थे। इन चारों भाइयों में सबसे बड़े राम थे। वे रावण का विनाश करने के लिए विष्णु के अंश से उत्पन्न हुए हैं। जनक राजा की सीता नाम की पुत्री उनकी प्राणप्यारी पत्नी थी-

राज्ञो दशरथस्यासीदयोध्याधिपतेः सुतः।
रामो भरतशत्रुघ्नलक्ष्मणानां पुराग्रजः॥
विष्णोरवततारांशो रावणोच्छेदनाय यः।
सीता तस्याभवद् भार्या प्राणेशा जनकात्मजा॥[2]

इस तरह से यहाँ जो राम के जन्म, वंश, स्थान के प्रति जो प्राचीन अवधारणा है उसी का प्रतिपादन सोमदेव यहाँ करते हैं। लेकिन वाल्मीकीय रामायण में लक्ष्मण का जन्मक्रम तीसरा है[3] जबकि यहाँ चौथा बताया गया है। राम के वनवास के सम्बन्ध में किसी प्रकार तर्क-वितर्क न करते हुए उसे दैवयोग ही माना गया है। जिसके विषय में कहा गया है-

स पित्रा भरतन्यस्तराज्येन विधियोगतः।
प्रेषितोऽभूद्वनं साकं सीतया लक्ष्मणेन च॥[4]

अर्थात् देवयोग से भरत को राज्य देकर पिता ने राम को सीता और लक्ष्मण के साथ वन भेज दिया। यहाँ पर कैकेयी इत्यादि का कोई प्रसंग नहीं आया है। राम के वनवास का कारण सोमदेव ने दैवयोग ही माना है।

---

१. कथासरित्सागर, ९/१/५७-५८
२. वही, ९/१/५९-६०
३. वाल्मीकीयरामायण, बालकाण्ड, ८/१२-१४
४. कथासरित्सागर, ९/१/६१

जबकि वाल्मीकीय रामायण में आदि ग्रन्थों में राम के वनवास का कारण कैकेयी को माना गया है।[५] रामवन चले जाते हैं जहाँ कपटपूर्वक रावण सीता का हरण करता है। मार्ग में रावण जटायु का वध कर सीता को लंका ले जाता है। तब वियोगी राम बालि को मारकर सुग्रीव से मित्रता करते हैं। पुनः वे लंका से सीता को प्राप्त करते हैं-

गत्वा च समरे सेतुं बद्ध्वा हत्वा च रावणम्।
लङ्कां विभीषणे न्यस्य सीतां प्रत्याजहार सः।।[६]

अर्थात् तदन्तर राम ने समुद्र तट पर जाकर उसमें पुल बांधकर रावण को मारा और लंका का राज्य विभीषण को देकर सीता को प्राप्त किया। हम यहाँ देखते हैं कि सोमदेव ने बड़े ही सीमित और संयमित होकर सम्पूर्ण विषय को प्रस्तुत किया है। कहीं किसी प्रकार का अवरोध नहीं उत्पन्न करते बल्कि तारतम्यता पूर्वक कथानक को कसते जाते हैं। लंका विजयोपरान्त भरत द्वारा सौंपे गये राज्य का राम पालन करने के साथ वे अपने जीवन में राजधर्म को उतारते हैं। अनन्तर उनकी पत्नी सीता गर्भधारण करती हैं। राम एक प्रजापालक राजा हैं। वे प्रजा के योग-क्षेम के साथ उनके रंजन के लिए भी चिन्तित रहते हैं। इसलिए वे प्रजा का समाचार जानने के लिए स्वयं एक दिन गुप्तचर का रूप धारण कर नगर में घूमने गये। जहाँ उन्होंने एक पुरुष को देखा जो अपनी पत्नी को घर से निकाल रहा था-

हस्ते गृहीत्वा गृहिणीं निरस्यन्तं निजाद् गृहात्।
परस्येयं गृहमगादिति दोषानुकीर्त्तनात्।।[७]

अर्थात् जो अपनी पत्नी को हाथ से खींचकर बाहर निकाल रहा था और वह उसका दोष घोषित कर रहा था कि उसकी स्त्री दूसरे व्यक्ति के घर जाकर रही है। यहाँ उस पुरुष द्वारा भी अपनी पत्नी के स्त्रीत्व को सामने रखा गया है। उसे अपनी पत्नी पर विश्वास नहीं है। मात्र एक रात्रि वह भी कुसमय में उसकी पत्नी किसी अपने बन्धु के घर रही थी। इस पर भी उसे अपनी पत्नी के स्त्रीत्व के विषय में सन्देह हो जाता है। जिसका परिणाम यह होता है कि वह अपनी पत्नी को घर से निकालने लगता है। घर तो पुरुष का है, यदि पुरुष अपनी स्त्री से प्रसन्न है तो पुरुष का सब कुछ स्त्री का है। यदि अप्रसन्न हुआ तो स्त्री शून्य पर पहुँच जाती है। क्या विडम्बना है हमारे समाज की?

आदिकवि वाल्मीकी के द्वारा भी लंका में सीता के अग्निशुद्धि की बात कही गयी है। वहाँ सीता के द्वारा राम के लिए जिस उलाहना को प्रस्तुत किया गया है वह किसी भी स्त्री के स्वाभिमान की रक्षा करता है। वहाँ कहा गया है-

त्वयातु नृपशार्दूल रोषमेवानुवर्तता।
लधुनेव मनुष्येण स्त्रीत्त्वमेव पुरस्कृतम्।।

---

५. वाल्मीकीयरामायण, अयोध्याकाण्ड, १८

६. कथासरित्सागर, ९/१/६४

७. वही, ९/१/५९-६७

न प्रमाणीकृतः पाणिर्बाल्ये मम निपीडितः।
मम भक्तिश्च शीलं च सर्वं ते पृष्ठतः कृतम्॥[८]

अर्थात् हे नृप श्रेष्ठ! आपने ओछे मनुष्य की भांति केवल रोष का अनुसरण करके मेरे शील-स्वभाव का विचार छोड़कर केवल निम्न कोटि की स्त्रियों के स्वभाव को ही सामने रखा है। बाल्यावस्था में आपने मेरा पाणिग्रहण किया है। इस ओर भी ध्यान नहीं दिया। आपके प्रति मेरे हृदय में जो भक्ति है और मुझमें जो शील है वह सब आपने पीछे ढकेल दिया, एक साथ ही भुला दिया। लेकिन 'कथासरित्सागर' में उस स्त्री द्वारा अपने पति को जो उलाहना दी जाती है वह लोक जीवन के समीप की उलाहना है। वह प्रतिरोध के संस्कृति की उलाहना है। वह कहती है-

रक्षोगृहोषिता सीता रामदेवेन नोज्झिता।
अयमभ्यधिको यो मानुज्झति ज्ञातिवेश्मगाम्॥
इति तद् गृहिणीं तां च ब्रूवतीं तं निजं पतितं।
रामो राजा स शुश्राव जिन्नश्चाभ्यन्तरं ययौ॥[९]

अर्थात् राजा राम ने उस स्त्री को अपने पति से इस तरह कहते हुए सुनकर अत्यन्त दुःख, खेद और लज्जा का अनुभव किया कि राक्षस के घर में रही हुई सीता को रामचन्द्र ने नहीं छोड़ा। यह मेरा पति उनसे भी बड़ा है जो अपने ही बन्धु के घर में रही हुई मुझे त्याग रहा है। जिसे सुनकर राम लोक निन्दा के भय से सीता को जंगल में छोड़ देते हैं। गर्भ भार से खिन्न सीता वन में वाल्मीकि के आश्रम में पहुँचती हैं और ऋषि का आशवासन पाकर वहीं रुक जाती हैं। आश्रम के अन्य ऋषि-मुनि सीता के वहाँ रहने पर स्वयं उस आश्रम से दूसरे आश्रम में जाने की बात करते हैं क्योंकि उनके मन में भी सीता के सतीत्त्व के विषय में सन्देह है। वे सीता को दूषित चरित्र समझते हैं-

नूनं सीता सदोषेयं त्यक्ता भर्त्रान्यथा कथम्।
तदेतद् दर्शनान्नित्यं पापं संक्रामतीह नः॥
वाल्मीकिः कृपया चैनां निर्वासयति नाश्रमात्।
एतद्दर्शनजं पापं तमसा च व्यपोहति॥
तदेत यावद् गच्छामो द्वितीयं किञ्चदाश्रमम्।
इति सम्मन्त्रयामासुस्तत्रान्ये मुनयस्तदा॥[१०]

अर्थात् सीता अवश्य दुष्टा है अन्यथा उसका पति उसे क्यों छोड़ता? उसका प्रतिदिन दर्शन करने से लोगों को पाप चढ़ता है। वाल्मीकि तो दया के कारण उसे आश्रम से नहीं निकालेंगे और उसके दर्शन से होने वाले पाप

---

८. वाल्मीकीयरामायण, युद्धकाण्ड, १/६/१४,१६
९. कथासरित्सागर, ९/१/६८-६९
१०. वही, ९/१/७२-७४

को तप से नष्ट करेंगे। इसलिए चलिए किसी दूसरे आश्रम में चलें। जिस समय सीता वाल्मीकि के आश्रम में पहुँची थी उनका गर्भ परिलक्षित होने लगा था। उस समय यदि किसी स्त्री का पति उसे निर्वासित करता है तो स्त्री के विषय में सन्देह होना स्वाभाविक है। सोमदेव के द्वारा सहज रूप से स्त्री के चरित्र के विषय में जो लोक भावना होती है उसका वर्णन यहाँ किया गया है। जिस सीता के प्रति नगर में अपवाद है उसका आश्रम में आना तो और स्वाभाविक है क्योंकि वहाँ तब और चरित्र ही पूजनीय माना जाता है। वहाँ तो ठीक से चरित्र को परखकर ही रहने की अनुमति दी जाती है। अनन्तर वाल्मीकि सबको समझाते हैं कि मेरी बुद्धि सीता की पवित्रता जाँच चुकी है। लेकिन लोगों को विश्वास नहीं होता है। इसलिए सीता शपथपूर्वक कहती हैं-

भगवन्तो यथा वित्थ तथा शोधयतेह माम।
अशुद्धायाः शिरश्छेदनिग्रहः क्रियतां मम॥ [11]

अर्थात् आप लोग जैसा समझे उस प्रकार मेरी शुद्धि की जांच करें। यदि में अशुद्ध होंऊ तो मेरा सिर काटकर मुझे दण्ड दें। इतने पर भी वे ऋषि-मुनि नहीं माने। वे घोर वन में स्थित 'टीटिभ' तीर्थ में सीता को अपनी शुद्धता का प्रमाण देने को कहते हैं। सीता उस समय उनकी हर आज्ञा को मानने के लिए बाध्य थी क्योंकि उन्हें गर्भ में पल रहे सन्तान की रक्षा करनी थी और स्वयं के ऊपर लगे अपयश से मुक्ति पानी थी इसलिए वे टीटिभ तीर्थ के जल में प्रवेश करके शपथपूर्वक कहती हैं-

यद्यार्यपुत्रादन्यत्र न स्वप्नेऽपि मनो मम।
तदुत्तरेयं सरसः पारमम्ब वसुन्धरे॥ [12]

अर्थात् यदि आर्य पुत्र राम के अतरिक्त स्वप्न में भी मेरा मन परपुरुष की ओर न गया हो तो हे वसुन्धरे! मैं इस तालाब के पार हो जाऊं। इस तरह टीटिभ तीर्थ के सरोवर से माता पृथ्वी सीता को पार कराकर उनके सतीत्त्व का प्रमाण देती हैं। जिस पर महामुनियों ने सीता की प्रणामपूर्वक प्रशंसा की है। वे राम को शाप देने के लिए भी उद्धत हो जाते हैं। जिस पर सीता उन्हें ऐसा न करने का आग्रह करती हैं।

इस प्रकार 'कथासरित्सागर' में वाल्मीकि आश्रम में ऋषियों और मुनियों के द्वारा उनकी सतीत्त्व की परीक्षा ली जाती है। इसी प्रकार श्रीधरकृत मराठी ग्रन्थ 'श्रीरामविजय' के उत्तरकाण्ड अध्याय-सैंतीस में वर्णन आया है कि लक्ष्मण द्वारा सीता को जंगल में छोड़े जाने पर उनसे वाल्मीकि मिलते हैं और अपने आश्रम लिवा आते हैं। जिस पर वाल्मीकि के ब्राह्मण शिष्य सीता के आश्रम में आने पर विरोध करते हुए कहते हैं कि यदि यह पवित्र होगी तो तुरन्त गंगा को ले आये और गंगा यदि नहीं आती है तो इसे आश्रम से निकाल दीजिए। यह सुनकर सीता गंगा का आवाहन करती हुई कहती है कि हे मकर के कुल का उद्धार करने वाली, हे विष्णु के चरणों से उत्पन्न गंगा, हे जह्नुतनया, ब्रह्माण्ड को फोड़कर अद्भुत रूप से तुम स्वयं प्रकट हो जाओ। इस तरह सीता अनेकप्रकार से गंगा की स्तुति करती हैं और गंगा प्रकट हो जाती है। तब जाकर आश्रम के लोग सीता का अभिनन्दन करते हैं। कुछ समय बाद सीता सुखपूर्वक वाल्मीकि आश्रम में रहते हुए पुत्र-प्रसव करती हैं। पुत्र का

---

११. वही, ९/१/७६-७७

१२. वही, ९/१/८१

नाम महर्षि लव रखते हैं।

किसी समय बालक लव को सीता साथ लेकर स्नान करने चली गयी थी। महर्षि वाल्मीकि ने पर्णकुटी में बालक को नहीं देखा। उन्हें लगा कि बालक को कोई हिंसक पशु खा गया। इसलिए सीता के पुत्र वियोग में प्राण त्यागे जाने के भय से वाल्मीकि ने कुश की पवित्री बनाकर लव के समान एक दूसरे बालक की रचना कर दी और पर्णकुटी में बालक को रख दिया। सीता जब स्नान करके लौटती हैं तो कहती हैं कि हे मुनि मेरा बालक तो यहाँ है फिर यह दूसरा बालक इसी के समान कैसा? जिस पर मुनि सब वृत्तान्त बताते हुए कहते हैं-

भवितव्यं गृहाणैतं द्वितीयमनघे सुतम्।
कुशसंज्ञं मयायं यत्स्वप्रभावात्कुशैः कृतः।। [13]

अर्थात् हे पवित्र सीते यह भवितव्यता की बात है। अब इस दूसरे बालक को ग्रहण कर लो इसका नाम कुश है क्योंकि मैंने अपने प्रभाव से इसे कुशों द्वारा निर्मित किया है। इस तरह से सीता उन दोनों बालकों लव और कुश का पालन-पोषण करती हैं। दोनों ही क्षत्रियकुमार बाल्यावस्था में ही मुनि द्वारा दिव्यास्त्रादि विद्या को सीख लेते हैं। ये दोनों बालक कभी आश्रम के मृग को मारकर खा जाते हैं और मुनि वाल्मीकि के पूजनीय शिवलिंग को खिलौना बनाकर खेलने लगे थे, जिससे मुनि वाल्मीकि उन पर खिन्न हो जाते हैं और उन दोनों को प्रायश्चित करने की आज्ञा देते हैं-

गत्वा कुबेरसरसः स्वर्णपद्मान्ययं लवः।
तदुद्यानाच्च मन्दारपुष्पाण्यानयतु द्रुतम्।।
तैरतौ भ्रातरावेतल्लिङ्गमर्चयतामुभौ।
तेनैतयोरिदं पापमुपशान्ति गमिष्यति।। [14]

अर्थात् यह लव कुबेर के सरोवर में जाकर सोने के कमल ले आवे और उद्यान से मन्दार के पुष्प। उनसे दोनों भाई इस शिविलंग की पूजा करें तो इस पाप की शान्ति होगी। यह आदेश पाते ही लव स्वर्ण कमल और मन्दार पुष्प लाने के लिए प्रस्थान कर देता है और कुबेर सरोवर पर पहुँच जाता है, जहाँ उसका सामना रक्षकों से होता है। वह रक्षकों को मारकर स्वर्ण कमल और मन्दार पुष्प लेकर वहाँ से चल देता है। मार्ग में वह किसी वृक्ष के नीचे विश्राम कर ही रहा था कि राम के नरमेध (नरवलि) यज्ञ में किसी सुक्ष्मक्षणा पुरुष को ढूंढते हुए लक्ष्मण आ गये। लक्ष्मण युद्ध के लिए लव को ललकारते हैं। वे लव को सम्मोहनास्त्र से मोहित करके क्षात्र धर्म के अनुसार उसे बाँध कर अयोध्यापुरी ले गये। लव के न पहुँचने पर सीता को दुःखी देकर महर्षि वाल्मीकि कुश से लव को लाने के लिए कहते हैं-

नीतोऽयोध्यामवष्टभ्य लक्ष्मणेन सुतो लवः।
गच्छ मोचय तं तस्मादेभिरस्त्रैर्विनिर्जितात्।। [15]

---

१३. वही, ९/१/१२
१४. वही, ९/१/९७-९७
१५. वही, ९/१/१०४

अर्थात् पुत्र! लव को लक्ष्मण पकड़कर अयोध्या ले गया है। तुम जाओ और इन दिव्य अस्त्रों से उसको जीतकर और लव को छुड़ाकर ले आओ। इस प्रकार ऋषि वाल्मीकि के कहने पर कुश अयोध्या गया और युद्ध करते हुए यज्ञ भूमि को घेर लिया। जिस पर लक्ष्मण आक्रमण करते हैं और परास्त भी हो जाते हैं। महर्षि वाल्मीकि की कृपा से राम भी कुश को जीत नहीं सके। तब उन्होंने कुश से पूछा कि तुम कौन हो? उत्तर में निर्भीक कुश कहता है–

कुशस्ततोऽब्रवीद् बद्धवा लक्ष्मणेनाग्रजो मम।
आनीत इह तस्याहं मोचनार्थमिहागतः॥
आवां लवकुशौ रामतनयाविति जानकी।
माता नौ वक्ति चेत्युक्तवा तद्वृत्तान्तं शशंस सः॥ [१६]

अर्थात् तब कुश ने कहा लक्ष्मण ने मेरे बड़े भाई लव को बांध लिया है। उसे यहाँ लाओ। मैं उसे छुड़ाने के लिए आया हूँ। हम लव और कुश राम के पुत्र हैं। ऐसा माता जानकी कहती है। पुनः अपना वृत्तान्त सुनाता है। बालक कुश से राम बहुत प्रभावित होते हैं। ग्रामवासियों के द्वारा सीता की प्रशंसा होने लगती है। राम भी लव को देखकर रोने लगते हैं। दोनों लव और कुश को पास बुलाकर गले लगाते हुए कहते हैं वह पापी राम मैं ही हूँ–

सेषोऽहं पापो राम इति ब्रुवन्। [१७]

इस तरह सोमदेव ने राम से लव-कुश को मिलाने का अद्भुत कवि कर्म किया है। एक और अनुज कुश का अग्रज लव के प्रति प्रेम और उसका पराक्रम तथा साहस का परिचय मिलता है तो वहीं राजमद में चूर लक्ष्मण और राम की पराजय पुनः अश्रुपात से पश्चाताप की चिर ज्वाला भी निकल पड़ती है। सोमदेव ने इस कथानक को सुखान्त बनाया है। पुत्रों के मिलन के बाद राम उन्हें राजा बनाकर स्वयं सीता के साथ सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करते हैं–

आनाय्य सीतादेवीं च वाल्मीकेराश्रमात्ततः।
तया सह सुखं तस्थौ पुत्रन्यस्तभरोऽथ सः॥ [१८]

अर्थात् सीता देवी को वाल्मीकि के आश्रम से बुलाकर और पुत्रों को राज्यभार सौंपकर राम सुखपूर्वक रहने लगे। महाकवि भवभूति अपने **'उत्तररामचरितम्'** में और दिङ्नाग अपने **'कुन्दमाला'** में भी राम और सीता का पुनः मिलन कराते हैं। **'उत्तररामचरितम्'** गर्भाङ्क योजना में अरुन्धती राम को आदेश देती हुई कहती हैं–

नियोजय यथाधर्मंप्रिया तव धर्मचारिणीम्।
हिरण्यमय्याः प्रतिकृतेः पुण्यां प्रकृतिमध्वरे॥ [१९]

अर्थात् आप सुवर्णमयी प्रतिमा की पवित्र आधार स्वरूप अपनी सहधर्मिणी प्रिया सीता को धर्मानुकूल यज्ञ से नियुक्त करें। राम अरुन्धती की आज्ञा का पालन करते हुए सीता को स्वीकार कर लेते हैं तदोपरान्त कुश

१६. वही. ९/१/१०८-१०९
१७. वही. ९/१/११०
१८. वही. ९/१/११२
१९. उत्तररामचरितम्. ७/२०

और लव का राम से मिलन होता है। इस तरह पूरे परिवार से सीता कुश-लव का मिलन होता है।

इस प्रकार 'कथासरित्सागर' में नरवाहनदत्त और अलंकारवती को समझाते हुए यह कथा कंचनप्रभा के द्वारा कही गयी है। जिसमें पुरुष और स्त्री का सम्वाद तथा वाल्मीकि के आश्रम में सीता की परीक्षा दोनों कथानक लोक मान्यताओं और कथाओं से लिये गये प्रतीत होते हैं। जिसमें धैर्यशाली महापुरुषों के विरह वेदना और त्याग दिखाकर प्रेमी युगल को विरह वेदना सहन करने की प्रेरणा दी गयी है। यह रामकथा सम्पूर्ण जनमानस को सत्य, धर्म और न्याय पर चलने के लिए प्रेरित करती है इसीलिए इसकी प्रतिष्ठा पूरे विश्व में है। विश्व के सभी मानवों में आदर्श की स्थापना ही रामकथा का मूलोद्देश्य है। जिसके लिए अनेक कथानक, कथाएं कवि समाज के द्वारा जोड़ी भी गयी है और छोड़ी भी गयी है।

- सहायक-आचार्य, संस्कृत विभाग,
डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय,
सागर, मध्यप्रदेश-४७०००३